

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 11 अध्याय 31: श्रीकृष्ण का तिरोधान

5 October 2026



ब्रह्मा, शिव तथा समस्त देवता आकाश में एकत्र होकर भगवान् के अपने नित्य धाम में लौटने का दर्शन करते हैं, जब श्रीकृष्ण अपने कमल-नेत्र मूँदकर उस ज्योति में समा जाते हैं जो वे स्वयं हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है, जो श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं तथा शिक्षाओं के माध्यम से एक भक्तिपूर्ण यात्रा है। अब हम भगवान् की पृथ्वी-लीला के सबसे पावन तथा सबसे कोमल क्षण में पहुँचते हैं — जब श्रीकृष्ण, अपना कार्य पूर्ण करके, मानव-स्वरूप त्यागकर अपने अविनाशी धाम को लौट जाते हैं। स्वयं ब्रह्मा तथा शिव इसका दर्शन करने आते हैं, और सुकदेव गोस्वामी राजा परीक्षित को प्रभास के उस समुद्र-तट पर ले चलते हैं, जहाँ वह देखने को मिलता है जिसे कोई नेत्र पूर्णतः नहीं देख सकता।

अध्याय की जानकारी

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 11 (एकादश स्कन्ध)

- अध्याय: 31 (एकत्रिंश प्रवचन)
- अध्याय शीर्षक: भगवान् श्रीकृष्ण का तिरोधान
- प्रधान वक्ता: सुकदेव गोस्वामी, राजा परीक्षित को कथा सुनाते हुए
- प्रधान श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थान: प्रभास का समुद्र-तट, तथा द्वारका नगरी
- केन्द्रीय विषय: भगवान् का अपने पार्थिव स्वरूप से स्वेच्छा से अपने दिव्य धाम में लौट जाना, तथा उसका उनके कुटुम्बियों पर प्रभाव
- प्रधान श्लोक-सीमा: स्कन्ध 11, अध्याय 31, श्लोक 1-28
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

पिछले अध्याय का सन्दर्भ

पिछले प्रवचन में, प्रभास में एकत्र यदुवंशी वीर, ब्राह्मणों के शाप के भार तले, मदोन्मत्त होकर आपस में संघर्ष करते हुए एक-दूसरे का नाश कर बैठे। भगवान् बलराम ने तब अपनी योगशक्ति से समुद्र में प्रवेश किया। श्रीकृष्ण एक पीपल के वृक्ष तले बैठे थे, जहाँ जरा नामक व्याध ने उनके चरण को मृग समझकर बाण से बेध दिया; भगवान् ने उसे क्षमा कर स्वर्ग भेजा, और अपने सारथी दारुक को द्वारका भेजा यदुवंश के विनाश का समाचार लेकर।

देवता भगवान् के लौटने का दर्शन करने आते हैं

दारुक के जाते ही स्वर्ग में हलचल मच गई। ब्रह्मा पार्वती तथा शिव के साथ वहाँ आए; इन्द्र के नेतृत्व में देवगण, ऋषिगण, तथा अनेक दिव्य प्राणी उस तट पर एकत्र हुए, श्रीकृष्ण का गायन करते हुए, भगवान् के प्रस्थान का दर्शन करने हेतु उत्सुक।

श्रीशुक उवाच

अथ तत्रागमद् ब्रह्मा भवान्या च समं भवः ।

महेन्द्रप्रमुखा देवा मुनयः सप्रजेश्वराः ॥ १ ॥

śrī-śuka uvāca atha tatrāgamad brahmā bhavānyā ca samam bhavaḥ mahendra-pramukhā devā munayaḥ sa-prajeśvarāḥ

अर्थ: सुकदेव ने कहा: तब वहाँ ब्रह्मा आए, और पार्वती के साथ भगवान् शिव, और महेन्द्र के नेतृत्व में देवतागण, तथा प्रजापतियों के साथ ऋषिगण। (स्कन्ध 11, अध्याय 31, श्लोक 1)

परम भक्ति से भरी हुई, इस तेजस्वी सभा ने आकाश में भरे हुए विमानों की पंक्तियों से फूलों की वर्षा की।

ववृषुः पुष्पवर्षाणि विमानावलिभिर्नभः ।

कुर्वन्तः सङ्कुलं राजन् भक्त्या परमया युताः ॥ ४ ॥

vavṛṣuḥ puṣpa-varṣāṇi vimānāvalibhir nabhaḥ kurvantaḥ saṅkulaṁ rājan bhaktyā paramayā yutāḥ

अर्थ: हे राजन्, परम भक्ति से युक्त होकर उन्होंने फूलों की वर्षा की, आकाश को अपने विमानों की पंक्तियों से भर दिया। (स्कन्ध 11, अध्याय 31, श्लोक 4)

भगवान् अपनी ही ज्योति में समा जाते हैं

श्रीकृष्ण ने अपनी दृष्टि अपने पितामह ब्रह्मा तथा समस्त एकत्र देवताओं पर डाली — जो स्वयं उनकी ही विभूतियाँ थे। तब अपने मन को अपने ही स्वरूप में संयोजित करके उन्होंने अपने कमल-नेत्र धीरे से मूँद लिए। उन्होंने अपने सुन्दर शरीर को, जो ध्यान का मंगलमय विषय है, भस्म नहीं किया, अपितु योगधारणा से अपने नित्य धाम में प्रविष्ट हो गए, अपने स्वरूप सहित, अखण्ड तथा पूर्ण।

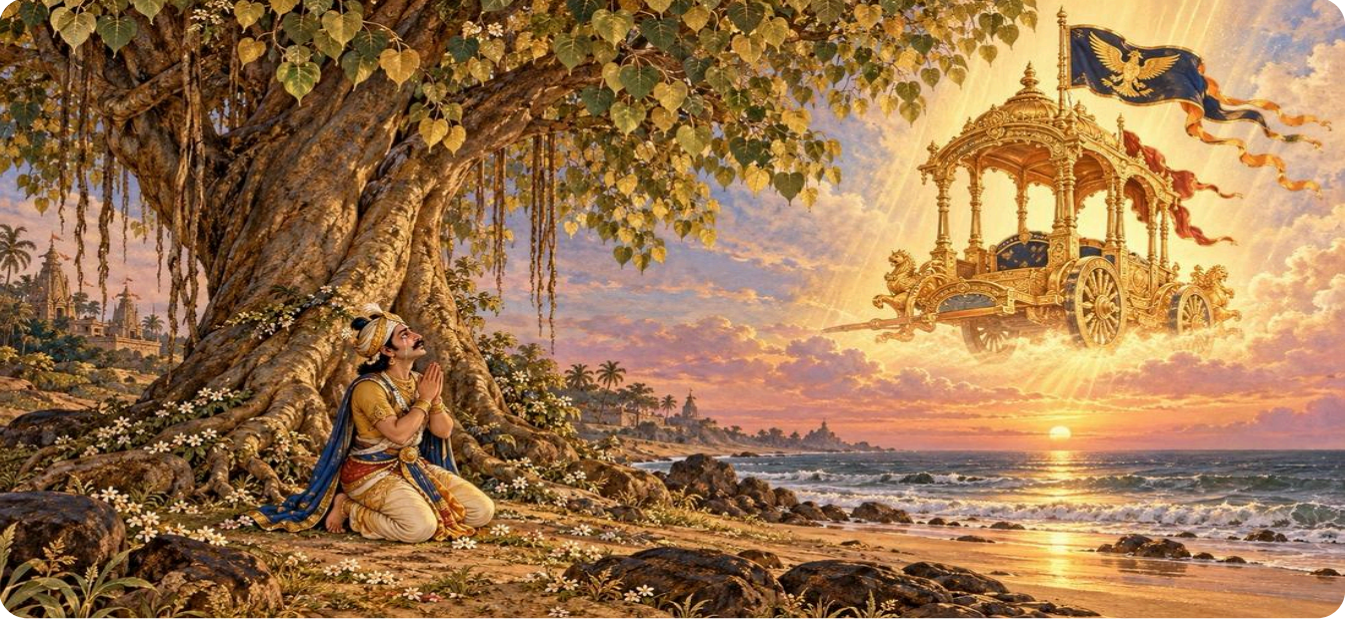
लोकाभिरामां स्वतनुं धारणाध्यानमङ्गलम् ।

योगधारणयाग्नेय्यादग्ध्वा धामाविशत् स्वकम् ॥ ६ ॥

lokābhirāmāṁ sva-tanuṁ dhāraṇā-dhyāna-maṅgalam yoga-dhāraṇayāgneyyā- dagdhvā dhāmāviśat svakam

अर्थ: अग्नि-तत्त्व पर योगधारणा के द्वारा उन्होंने अपने उस शरीर को, जो समस्त लोकों का प्रिय तथा ध्यान-मंगल का विषय है, अपने में समाहित कर लिया, और अपने नित्य धाम में प्रविष्ट हो गए। (स्कन्ध 11, अध्याय 31, श्लोक 6)

उस क्षण नगाड़े स्वयं बज उठे और फिर फूलों की वर्षा हुई; भगवान् के साथ ही सत्य, धर्म, धैर्य, कीर्ति तथा श्री भी पृथ्वी से विदा हो गई।



भगवान् के अपनी ही ज्योति में समाने के समय भी, उनके शोकाकुल सारथी दारुक उन्हें उस पीपल वृक्ष के पास खोजते हैं, द्वारका के भविष्य का समाचार लेकर।

देवताओं के लिए भी एक रहस्य

ब्रह्मा तथा देवतागण भी उस गमन को न देख सके; केवल कुछ भाग्यशाली ही उसकी आभा देख सके। श्रीकृष्ण की गति, सुकदेव ने कहा, वैसे ही नहीं जानी जा सकती जैसे आकाश में विलीन बिजली की चमक, जो केवल बादल पीछे छोड़ जाती है।

सौदामन्या यथाकाशे यान्त्या हित्वाभ्रमण्डलम् ।

गतिर्न लक्ष्यते मर्त्यैस्तथा कृष्णस्य दैवतैः ॥ ९ ॥

saudāmanyā yathākāśe yāntyā hitvābhra-maṇḍalam gatiṛ na lakṣyate martyais tathā kṛṣṇasya daivataiḥ

अर्थ: जिस प्रकार आकाश में विलीन होती बिजली की गति, जो बादल का समूह छोड़ जाती है, मर्त्यों द्वारा नहीं जानी जा सकती, उसी प्रकार देवतागण भी श्रीकृष्ण की गति को नहीं जान सकते। (स्कन्ध 11, अध्याय 31, श्लोक 9)

इस योगशक्ति से चमत्कृत होकर ब्रह्मा, शिव तथा अन्य सभी अपने-अपने लोक लौट गए।

सुकदेव का उपदेश — भगवान् की माया-लीला

यहाँ सुकदेव राजा परीक्षित के समक्ष इस अध्याय की मूल शिक्षा खोलते हैं, जिससे कोई इसे अन्त न समझ ले। देहधारियों के बीच भगवान् का प्रकट होना, विचरण करना, और अब तिरोधान — ये सब कुछ नहीं, केवल उनकी ही माया की लीला है, ठीक जैसे कोई अभिनेता किसी पात्र को धारण करता है। अपनी ही इच्छा से उन्होंने इस सृष्टि को रचा, उसमें अन्तर्यामी रूप से प्रवेश किया, उसमें विहार किया, और अन्त में उसे अपने में समेट लिया — और इस सबके मध्य वे अपनी ही अपरिवर्तनीय महिमा में स्थित रहे।

राजन् परस्य तनुभृज्जननाप्ययेहा
मायाविडम्बनमवेहि यथा नटस्य ।
सृष्ट्वात्मनेदमनुविश्य विहृत्य चान्ते
संहृत्य चात्ममहिनोपरतः स आस्ते ॥ ११ ॥

*rājan parasya tanu-bhṛj-jananāpyayehā māyā-viḍambanam avehi yathā naṭasya
sṛṣṭvātmanedam anuvīśya vihṛtya cānte saṁhṛtya cātma-mahinoparataḥ sa āste*

अर्थ: हे राजन्, जानो कि देहधारियों के बीच परमेश्वर का जन्म, क्रियाकलाप तथा तिरोधान किसी अभिनेता की भाँति उनकी ही माया की लीला है। इस विश्व को स्वयं रचकर, उसमें प्रवेश करके, उसमें विहार करके, तथा अन्त में उसे अपने में समेटकर, वे अपनी ही महिमा में स्थित रहते हैं। (स्कन्ध 11, अध्याय 31, श्लोक 11)

यह कोई असहायता नहीं है। क्या वे अपने शरीर की रक्षा करने में असमर्थ थे — वे, जिन्होंने अपने गुरु के पुत्र को यमलोक से लौटाया, जिन्होंने अश्वत्थामा के परम अस्त्र से दग्ध होने पर स्वयं परीक्षित को गर्भ में पुनर्जीवित किया, जिन्होंने स्वयं शिव को भी जीत लिया, और जो व्याध जरा को साक्षात् स्वर्ग ले गए? इसके विपरीत, आगामी श्लोक में सुकदेव इसका गहन कारण स्पष्ट करते हैं।

तथाप्यशेषस्थितिसम्भवाप्यये-
ष्वनन्यहेतुर्यदशेषशक्तिधृक् ।
नैच्छत् प्रणेतुं वपुरत्र शेषितं
मर्त्येन किं स्वस्थगतिं प्रदर्शयन् ॥ १३ ॥

*tathāpy aśeṣa-sthiti-sambhavāpyayeṣv ananya-hetur yad aśeṣa-śakti-dhṛk naicchat praṇetum
vapur atra śeṣitam martyena kiṁ sva-stha-gatiṁ pradarśayan*

अर्थ: यद्यपि वे ही समस्त वस्तुओं की उत्पत्ति, स्थिति तथा प्रलय के एकमात्र कारण हैं, तथा समस्त शक्ति से सम्पन्न हैं, उन्होंने मर्त्य उपायों से अपने शेष शरीर की रक्षा करना नहीं चाहा — इस प्रकार अपने सच्चे स्वरूप में स्थित पुरुषों का शरीर के प्रति उदासीन भाव दर्शाते हुए। (स्कन्ध 11, अध्याय 31, श्लोक 13)

जो प्रातःकाल उठकर श्रद्धापूर्वक श्रीकृष्ण के इस परम गमन का कीर्तन करता है, सुकदेव कहते हैं, वह भी उसी परम गति को प्राप्त करता है।

दारुक का शोक तथा द्वारका के कुल का पतन

दारुक, भगवान् से वियुक्त होकर, द्वारका लौटे और वसुदेव तथा राजा उग्रसेन के चरणों में अश्रुपूरित गिर पड़े। वृष्णिवंश के विनाश का समाचार सुनकर प्रजा शोक से मूर्छित हो गई; सिर पीटते हुए वे उस स्थान की ओर दौड़े जहाँ मृतक पड़े थे। श्रीकृष्ण तथा बलराम को जीवितों में न पाकर, देवकी, रोहिणी तथा वसुदेव मूर्छित हो गए, और वियोग की पीड़ा इतनी तीव्र थी कि उन्होंने वहीं प्राण त्याग दिए।

रानेयों पावन आग्ने में प्रवेश करती हैं

जो आगे हुआ, उसे सुकदेव अत्यन्त कोमलता से कहते हैं, क्योंकि ऐसा शोक जल्दी में नहीं कहा जा सकता। पीछे रहने के स्थान पर, यदुकुल की स्त्रियों ने अपने प्रियतम के साथ पावन अग्नि में समाने का निश्चय किया।

रामपत्न्यश्च तदेहमुपगुह्याग्निमाविशन् ।

वसुदेवपत्न्यस्तद्गात्रं प्रद्युम्नादीन् हरेः स्नुषाः ।

कृष्णपत्न्योऽविशन्नग्निं रुक्मिण्याद्यास्तदात्मिकाः ॥ २० ॥

rāma-patnyāś ca tad-deham upaguhyāgnim āviśan vasudeva-patnyas tad-gātram pradyumnādīn hareḥ snuṣāḥ kṛṣṇa-patnyo 'viśann agniṁ rukmiṇy-ādyās tad-ātmikāḥ

अर्थ: बलराम की पत्नियाँ उनके शरीर को आलिंगन कर अग्नि में समा गई; वसुदेव की पत्नियाँ उनके शरीर को आलिंगन कर; भगवान् की पुत्र-वधुओं ने प्रद्युम्न-आदि को आलिंगन कर वैसा ही किया; और रुक्मिणी-आदि श्रीकृष्ण की रानियाँ, अपना मन उन्हीं पर पूर्णतः स्थिर करके, अग्नि में समा गई। (स्कन्ध 11, अध्याय 31, श्लोक 20)



प्रातःकाल तट पर, यदुकुल की स्त्रियाँ पीछे रहने के स्थान पर पावन अग्नि को चुनती हैं, और प्रभास में मारे गए कुटुम्बियों का विधिपूर्वक सम्मान किया जाता है (श्लोक 20)।

अर्जुन का शोक तथा दिवंगतों के संस्कार

अर्जुन भी अपने परम प्रिय सखा के वियोग को सहन नहीं कर पा रहे थे। शान्ति के लिए उन्होंने भीतर की ओर देखा — रणभूमि में स्वयं श्रीकृष्ण द्वारा कहे गए उन्हीं पावन वचनों की ओर, जो भगवद्गीता का उपदेश है।

अर्जुनः प्रेयसः सख्युः कृष्णस्य विरहातुरः ।

आत्मानं सान्त्वयामास कृष्णगीतैः सदुक्तिभिः ॥ २१ ॥

arjunaḥ preyaśaḥ sakhyuḥ kṛṣṇasya virahāturaḥ ātmānaṁ sāntvayām āsa kṛṣṇa-gītaiḥ sad-uktibhiḥ

अर्थ: अपने परम प्रिय सखा कृष्ण के वियोग से व्यथित अर्जुन ने कृष्ण द्वारा कहे गए सत्य तथा पावन वचनों से अपने हृदय को शान्त किया। (स्कन्ध 11, अध्याय 31, श्लोक 21)

इस प्रकार स्वयं को सम्भालकर अर्जुन ने अपने उन सभी कुटुम्बियों के लिए, जो प्रभास में मारे गए थे, क्रमानुसार विधिपूर्वक अन्त्येष्टि संस्कार सम्पन्न कराए, उनके परलोक-कल्याण हेतु।

समुद्र द्वारका को समेट लेता है

भगवान् द्वारा वह नगरी छोड़े जाने पर समुद्र ने उसे अपने आगोश में ले लिया — किन्तु एक स्थान को छोड़कर, जहाँ वे आज भी साक्षात् विद्यमान हैं।

द्वारकां हरिणा त्यक्तां समुद्रोऽप्लावयत् क्षणात् ।

वर्जयित्वा महाराज श्रीमद्भगवदालयम् ॥ २३ ॥

dvārakāṁ hariṇā tyaktāṁ samudro 'plāvayat kṣaṇāt varjayitvā mahā-rāja śrīmad-bhagavad-ālayam

अर्थ: हे महाराज, श्रीकृष्ण द्वारा त्यागी गई द्वारका को समुद्र ने क्षणभर में डुबा दिया — केवल भगवान् के मंगलमय निवास को छोड़कर। (स्कन्ध 11, अध्याय 31, श्लोक 23)



श्रीकृष्ण द्वारा द्वारका त्यागे जाते ही समुद्र उसे क्षणभर में समेट लेता है — केवल भगवान् के अपने तेजस्वी राजभवन को छोड़कर (श्लोक 23)।

अर्जुन बचे हुए लोगों को इन्द्रप्रस्थ ले जाते हैं

बची हुई स्त्रियों, बालकों तथा वृद्धों को लेकर अर्जुन उन्हें इन्द्रप्रस्थ ले गए और वहाँ स्थापित किया, तथा अनिरुद्ध के पुत्र वज्र को यदुकुल के शेष भाग का राजा बनाया। यह समाचार सुनकर पाण्डव हिमालय की ओर अपनी अन्तिम यात्रा पर निकल पड़े, और परीक्षित को हस्तिनापुर के सिंहासन पर उत्तराधिकारी नियुक्त किया।



अर्जुन बची हुई स्त्रियों, बालकों तथा वृद्धों को इन्द्रप्रस्थ ले जाते हैं और युवा वज्र को यदुकुल के शेष भाग का राजा बनाते हैं।

इस पावन तिरोधान को सुनने का फल

सुकदेव राजा परीक्षित तथा हर श्रोता से एक वचन देकर इस प्रवचन को समाप्त करते हैं। जो कोई स्वयं देवताओं के आराध्य भगवान् विष्णु की इन लीलाओं तथा इस जन्म का श्रद्धापूर्वक वर्णन करता है, वह समस्त पापों के बन्धन से मुक्त हो जाता है; और जो कोई यहाँ या किसी अन्य शास्त्र में, भगवान् के मनोहर अवतारों की इन मंगलमय लीलाओं तथा तेजस्वी कर्मों का कीर्तन करता है, वह उसी परम भक्ति को प्राप्त करता है जो महापुरुषों का परम लक्ष्य है।

इत्थं हरेर्भगवतो रुचिरावतार-

वीर्याणि बालचरितानि च शन्तमानि ।

अन्यत्र चेह च श्रुतानि गृणन् मनुष्यो

भक्तिं परां परमहंसगतौ लभेत ॥ २८ ॥

itthaṁ harer bhagavato rucirāvatāra- vīryāṇi bāla-caritāni ca śantamāni anyatra ceha ca śrutāni gṛṇan manuṣyo bhaktiṁ parāṁ paramahansa-gatau labheta

अर्थ: इस प्रकार, जो कोई भगवान् के मनोहर अवतारों के कर्मों तथा उनकी मंगलमय बाल-लीलाओं का, यहाँ या अन्यत्र सुने जाने पर, कीर्तन करता है, वह उस परम भक्ति को प्राप्त करता है जो परमहंसों का परम लक्ष्य है। (स्कन्ध 11, अध्याय 31, श्लोक 28)



राजा परीक्षित चमत्कृत होकर सुनते हैं, जब सुकदेव गोस्वामी वचन देते हैं कि इस पावन तिरोधान का भक्तिपूर्वक कीर्तन करना स्वयं परम भक्ति की प्राप्ति है (श्लोक 28)।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. भगवान् का तिरोधान उनकी ही माया है, कोई अन्त नहीं। देहधारियों के बीच उनका जन्म, लीला तथा तिरोधान किसी अभिनेता द्वारा पात्र धारण करने तथा त्यागने की भाँति केवल उनकी ही माया की लीला है — जो रचते, प्रवेश करते, विहार करते तथा संहार करते हैं, वे अपनी अपरिवर्तनीय महिमा में स्थित ही रहते हैं (श्लोक 11)।

2. शरीर के प्रति उनकी उदासीनता आत्मस्थ पुरुषों का लक्ष्य दर्शाती है। समस्त सृष्टि के एकमात्र कारण तथा असीम शक्ति के स्वामी होते हुए भी, उन्होंने अपना दृश्य स्वरूप पृथ्वी पर नहीं रखा, जिससे आत्मस्थ पुरुषों की शरीर के प्रति उदासीनता प्रकट हो (श्लोक 13)।

3. देवतागण भी भगवान् की गति को नहीं जान सकते। ब्रह्मा तथा शिव भी भगवान् के गमन को नहीं देख सके, जो देव-दृष्टि से भी परे है, ठीक जैसे आकाश में विलीन हुई बिजली की चमक नेत्रों से छूट जाती है (श्लोक 9)।

4. प्रेम शरीर के अभाव से समाप्त नहीं होता। देवकी, रोहिणी, वसुदेव, रानियों तथा अर्जुन का शोक दर्शाता है कि सच्ची भक्ति भगवान् के वियोग को असह्य वेदना के रूप में अनुभव करती है — फिर भी अर्जुन कृष्ण के ही उपदेश, भगवद्गीता, का सहारा लेकर अपने हृदय को सम्भालते हैं (श्लोक 20-21)।

5. भगवान् का अपना धाम कभी हानि से स्पर्श नहीं होता। समुद्र ने द्वारका को समेट लिया, किन्तु भगवान् के अपने राजभवन को नहीं समेट सका, क्योंकि वे वहाँ आज भी साक्षात् विद्यमान हैं — यह संकेत देते हुए कि भगवान् का जो है वह समय की पहुँच से परे है (श्लोक 23)।

6. इस तिरोधान को सुनना तथा कीर्तन करना परम भक्ति देता है। सुकदेव वचन देते हैं कि जो इस पावन तिरोधान का भक्तिपूर्वक कीर्तन करता है, या भगवान् की लीलाओं तथा जन्मों का श्रद्धापूर्वक वर्णन करता है, वह पाप से मुक्त होकर परम भक्ति को प्राप्त करता है, जो मुक्त पुरुषों का लक्ष्य है (श्लोक 14, 27-28)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय में कुछ ऐसा है जो भागवत के किसी अन्य अध्याय में नहीं मिलता — एक अन्त की नीरवता, जो साथ ही, किसी प्रकार, अन्त नहीं है। हम देखते हैं कि ब्रह्मा स्वयं चमत्कृत खड़े हैं, यह जान न पाते कि भगवान् कहाँ गए; हम देखते हैं कि माताएँ तथा पत्नियाँ उनके बिना जीने के स्थान पर अपने प्राण त्याग देती हैं; किन्तु सुकदेव, यह सब कहते-कहते भी, परीक्षित को कोमलता से स्मरण कराते रहते हैं कि इससे भगवान् को कोई स्पर्श नहीं करता। जो रंगमंच में अभिनेता की भाँति प्रवेश करते हैं, वे अब बस रंगमंच से उतर जाते हैं, वैसे ही पूर्ण तथा तेजस्वी जैसे वे सदा थे। सम्भवतः यही इस अध्याय का सबसे गहन सन्तोष है: वियोग का शोक सत्य तथा पावन है, उसे नकारने की आवश्यकता नहीं — अर्जुन भी अन्यथा होने का दिखावा नहीं करते — किन्तु वही शोक घर लौटने का मार्ग भी बन सकता है, जब हम अर्जुन की भाँति भगवान् के अपने वचनों का सहारा लेकर अपने हृदय को सम्भालें।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, इस अध्याय के इस वचन की भावना में, यदि सम्भव हो तो प्रातःकाल उठिए और कुछ शान्त क्षण भगवान् श्रीकृष्ण के अपने धाम को लौटने का स्मरण करने में व्यतीत कीजिए — शोक के रूप में नहीं, अपितु उस अद्भुत, ज्योतिर्मय घर-वापसी के रूप में जो वह वास्तव में थी। अपने हृदय में दारुक, अर्जुन तथा यदुकुल की वेदना को भी अनुभव करें, और उसके नीचे सुकदेव द्वारा दी गई गहरी शान्ति को भी: जो भगवान् इस संसार में प्रवेश करते तथा इससे निकल जाते हैं, वे कभी स्वयं से विलग नहीं होते, और इसलिए जो उन्हें प्रेम करता है, वह भी उनसे कभी सच में विलग नहीं होता। अपने नेत्र मूँदिए, जैसे उन्होंने अपने मूँदे, और धीरे से कहिए: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।”

उपसंहार

इस सर्वाधिक पावन प्रवचन में, ब्रह्मा, शिव तथा देवतागण फूलों तथा श्रद्धा के साथ एकत्र होते हैं वह देखने के लिए जिसे कोई नेत्र पूर्णतः नहीं देख सकता — भगवान् श्रीकृष्ण का अपने ही स्वरूप को, अखण्ड तथा सम्पूर्ण, अपने नित्य धाम में समेट लेना। सुकदेव इस शिक्षा का हृदय खोलते हैं: यह गमन, उनके आगमन की ही भाँति, उनकी अपनी माया है, उस एक की लीला जो कभी जन्म-मृत्यु से बँधा नहीं, जिन्होंने अपना शरीर यहाँ नहीं रखा केवल आत्मस्थ पुरुषों की शरीर के प्रति उदासीनता दर्शाने के लिए। किन्तु यह अध्याय मानवीय मूल्य को छिपाता नहीं — दारुक के आँसू, द्वारका की मूर्छा, रानियों का पावन अग्नि में प्रवेश, अर्जुन का भगवान् के अपने वचनों पर सम्भलना, समुद्र का नगरी को समेट लेना किन्तु भगवान् के अपने भवन को कभी नहीं। अर्जुन बचे हुए लोगों को इन्द्रप्रस्थ ले जाते हैं, युवा वज्र को राजा बनाते हैं, और पाण्डव हिमालय की ओर प्रस्थान करते हैं, परीक्षित को सिंहासन पर छोड़कर। सुकदेव हमें, जैसे वे राजा को छोड़ते हैं, इस एक वचन के साथ छोड़ते हैं: इस पावन तिरोधान का भक्तिपूर्वक कीर्तन करना स्वयं उस भगवान् की ओर चलने का मार्ग है जिसका यह वर्णन करता है।

श्रीमद्भागवतम् की दिव्य वाणी हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), एकादश स्कन्ध, एकत्रिंश प्रवचन, पृष्ठ 664–667।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक से किसी सम्बन्ध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-11-adhyay-31-shri-krishna-tirodhan-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज़डम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट